अध्याय चार

कार्यपालिका

11103CH04

परिचय

विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका सरकार के तीन अंग हैं। ये तीनों मिलकर शासन का कार्य करते हैं तथा कानून-व्यवस्था बनाए रखने और जनता का कल्याण करने में योगदान देते हैं। संविधान यह सुनिश्चित करता है कि ये सभी एक-दूसरे से तालमेल बना कर काम करें और आपस में संतुलन बनाए रखें। संसदीय व्यवस्था में कार्यपालिका और विधायिका एक-दूसरे पर आश्रित है; विधायिका कार्यपालिका को न केवल नियंत्रित करती है बल्कि उससे नियंत्रित भी होती है। इस अध्याय में हम सरकार की कार्यपालिका के संगठन, संरचना और कार्यों का अध्ययन करेंगे। इस अध्याय में हमें यह भी पता चलेगा कि पिछले कुछ समय के राजनीतिक व्यवहार के कारण इसमें क्या परिवर्तन हुए हैं। इस अध्याय को पढ़ने से आप –

- *संसदीय और राष्ट्रपति प्रणाली की कार्यपालिका में अंतर कर सकेंगे;*
- *भारत के राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति को समझेंगे;*
- *मंत्रिपरिषद् की संरचना और कार्यों के बारे में जान सकेंगे; और*
- *प्रशासनिक मशीनरी के महत्त्व और कार्यों के बारे में जानेंगे।*

कार्यपालिका क्या है?

आपके स्कूल के प्रशासन का प्रमुख कौन है? किसी स्कूल या विश्वविद्यालय में महत्त्वपूर्ण निर्णय कौन लेता है? किसी भी संगठन में किसी पदाधिकारी को निर्णय लेना पड़ता है और उसे लागू करना पड़ता है। हम इस क्रिया को प्रशासन या प्रबंधन कहते हैं। लेकिन प्रशासन के लिए संगठन के शीर्ष पर एक ऐसा समूह होना चाहिए जो बड़े या नीतिगत निर्णय ले सके और दैनिक प्रशासनिक कार्यों की देख-रेख तथा उनमें तालमेल कर सके। ऐसे हर संगठन में कुछ लोगों का एक समूह होता है। ये लोग उस संगठन के मुख्य प्रशासनिक या कार्यपालिका अधिकारी के रूप में काम करते हैं। आपने शायद बड़ी कंपनियों, बैंकों और औद्योगिक इकाईयों के प्रशासनिक अधिकारियों के बारे में सुना होगा। उनमें से कुछ पदाधिकारी नीतियों, नियमों और कायदों के बारे में निर्णय लेते हैं, तो कुछ उसे संगठन में लागू करते हैं। कार्यपालिका का अर्थ व्यक्तियों के उस समूह से है जो कायदे-कानूनों को संगठन में रोज़ाना लागू करते हैं।

सरकार के मामले में भी, एक संस्था नीतिगत निर्णय लेती है और नियमों और कायदों के बारे में तय करती है; दूसरी उसे लागू करने की जिम्मेदारी निभाती है। सरकार का वह अंग जो इन नियमों-कायदों को लागू करता है और प्रशासन का काम करता है, कार्यपालिका कहलाता है।

कार्यपालिका के प्रमुख कार्य क्या हैं? कार्यपालिका सरकार का वह अंग है जो विधायिका द्वारा स्वीकृत नीतियों और कानूनों को लागू करने के लिए ज़िम्मेदार है। कार्यपालिका प्रायः नीति-निर्माण में भी भाग लेती है। कार्यपालिका का औपचारिक नाम अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न होता है। कुछ देशों में राष्ट्रपति होता है, तो कहीं चांसलर। कार्यपालिका में केवल राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री या मंत्री ही नहीं होते बल्कि इसके अंदर पूरा प्रशासनिक ढाँचा (सिविल सेवा के सदस्य) भी आते हैं। सरकार के प्रधान और उनके मंत्रियों को राजनीतिक कार्यपालिका कहते हैं और वे सरकार की सभी नीतियों के लिए उत्तरदायी होते हैं; लेकिन जो लोग रोज़-रोज़ के प्रशासन के लिए उत्तरदायी होते हैं, उन्हें स्थायी कार्यपालिका कहते हैं।

मुझे याद है कोई कह रहा था कि लोकतंत्र में कार्यपालिका जनता के प्रति उत्तरदायी होती है। क्या यह बड़ी कंपनियों के बड़े अधिकारियों के लिए भी सही है? क्या उन्हें हम मुख्य कार्यपालिका अधिकारी नहीं कहते? वे किसके प्रति उत्तरदायी है?

कार्यपालिका कितने प्रकार की होती है?

सभी देशों में एक ही तरह की कार्यपालिका नहीं होती। आपने अमेरिका के राष्ट्रपति और इंग्लैंड की महारानी के बारे में सुना होगा। लेकिन अमेरिका के राष्ट्रपति की शक्तियाँ और कार्य भारत के राष्ट्रपति की शक्तियों से बहुत अलग है। इसी प्रकार, इंग्लैंड की महारानी की शक्तियाँ भूटान के राजा से भिन्न है। भारत और फ्रांस दोनों ही देशों में प्रधानमंत्री है, पर उनकी भूमिकाएँ अलग-अलग हैं। ऐसा क्यों है?

खुद करें — खुद सीखें

सार्क सम्मेलन या जी-7 देशों की बैठक की एक फोटो प्राप्त करें और उन लोगों की सूची बनाएँ जिन्होंने उसमें भाग लिया। क्या आप सोच सकते हैं कि क्यों उन्हीं लोगों ने भाग लिया, अन्य लोगों ने क्यों नहीं?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हम इनमें से कुछ देशों की कार्यपालिकाओं की प्रकृति पर प्रकाश डालेंगे। अमेरिका में अध्यक्षात्मक व्यवस्था है और कार्यकारी शक्तियाँ राष्ट्रपति के पास हैं। कनाडा में संसदीय लोकतंत्र और संवैधानिक राजतंत्र है जिसमें महारानी एलिज़ाबेथ द्वितीय राज्य की प्रधान और प्रधानमंत्री सरकार का प्रधान है। फ्रांस में राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री अर्द्ध-अध्यक्षात्मक व्यवस्था के हिस्से हैं। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है पर उन्हें पद से हटा नहीं सकता क्योंकि वे संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। जापान में संसदीय व्यवस्था है जिसमें राजा देश का और प्रधानमंत्री सरकार का प्रधान है। इटली में एक संसदीय व्यवस्था है जिसमें राष्ट्रपति देश का और प्रधानमंत्री सरकार का प्रधान है। रूस में एक अर्द्ध-अध्यक्षात्मक व्यवस्था है जिसमें राष्ट्रपति देश का प्रधान और राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त प्रधानमंत्री सरकार का प्रधान है। जर्मनी में एक संसदीय व्यवस्था है जिसमें राष्ट्रपति देश का नाममात्र का प्रधान और चांसलर सरकार का प्रधान है।

अध्यक्षात्मक व्यवस्था में राष्ट्रपति राज्य और सरकार दोनों का ही प्रधान होता है। इस व्यवस्था में सिद्धांत और व्यवहार दोनों में राष्ट्रपति का पद बहुत शक्तिशाली होता है। ऐसी व्यवस्था अमेरिका, ब्राज़ील और लैटिन अमेरिका के अनेक देशों में पाई जाती है। संसदीय व्यवस्था में प्रधानमंत्री सरकार का प्रधान होता है। अधिकतर

कार्यपालिका के प्रकार
सामूहिक नेतृत्व के सिद्धांत पर आधारित प्रणाली
एक व्यक्ति के नेतृत्व के सिद्धांत पर आधारित प्रणाली
संसदीय
सरकार के प्रमुख को आमतौर पर प्रधानमंत्री कहते हैं।
वह विधायिका में बहुमत वाले दल का नेता होता है।
वह विधायिका के प्रति जवाबदेह होता है।
देश का प्रमुख इनमें से कोई भी हो सकता है:
राजा
राष्ट्रपति
अर्ध-अध्यक्षात्मक
राष्ट्रपति देश का प्रमुख होता है।
प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है।
प्रधानमंत्री और उसका मंत्रिपरिषद् विधायिका के प्रति जवाबदेह होता है।
अध्यक्षात्मक
राष्ट्रपति देश का प्रमुख होता है।
वही सरकार का भी प्रमुख होता है।
राष्ट्रपति का चुनाव आमतौर पर प्रत्यक्ष मतदान से होता है।
वह विधायिका के प्रति जवाबदेह नहीं होता।
संवैधानिक राजतंत्र
संसदीय गणतंत्र
औपचारिक शासन प्रमुख

श्रीलंका की अर्द्ध-अध्यक्षात्मक कार्यपालिका

1978 में श्रीलंका के संविधान का संशोधन करके अध्यक्षात्मक कार्यपालिका लागू की गई। इस प्रणाली में जनता प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रपति को चुनती है। यह संभव है कि राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री एक ही दल या अलग-अलग दलों के हों।

संविधान राष्ट्रपति को व्यापक शक्तियाँ देता है। राष्ट्रपति संसद में बहुमत वाले दल के सदस्यों में से प्रधानमंत्री चुनता है। यद्यपि मंत्रियों के लिए संसद का सदस्य होना अनिवार्य है, लेकिन राष्ट्रपति प्रधानमंत्री और दूसरे मंत्रियों को हटा सकता है। राज्य का निर्वाचित प्रधान और सशस्त्र सेनाओं का प्रधान सेनापति होने के अतिरिक्त, राष्ट्रपति सरकार का भी प्रधान होता है। राष्ट्रपति छः वर्ष के लिए चुना जाता है और उसे संसद की कुल सदस्य संख्या के दो तिहाई बहुमत से पारित प्रस्ताव के द्वारा ही हटाया जा सकता है। यदि वह प्रस्ताव संसद के कम से कम आधे सदस्यों द्वारा पास किया जाय और संसद का अध्यक्ष भी संतुष्ट हो कि आरोपों में दम है, तो संसद का अध्यक्ष उसे सर्वोच्च न्यायालय को भेज सकता है।

श्रीलंका के राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री की स्थिति भारत से कैसे भिन्न है? भारत और श्रीलंका के राष्ट्रपति के महाभियोग में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका की तुलना करें।

संसदीय व्यवस्थाओं में एक राष्ट्रपति या राजा होता है जो देश का औपचारिक या नाम मात्र का प्रधान होता है। इस व्यवस्था में राष्ट्रपति या राजा की भूमिका मुख्यतः अलंकारिक होती है और प्रधानमंत्री तथा मंत्रिमंडल के पास वास्तविक शक्ति होती है। जर्मनी, इटली, जापान, इंग्लैंड और पुर्तगाल आदि देशों में यह व्यवस्था है। अर्द्ध-अध्यक्षात्मक व्यवस्था में राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री दोनों होते हैं लेकिन संसदीय व्यवस्था के विपरीत उसमें राष्ट्रपति को दैनिक कार्यों के संपादन में महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हो सकती हैं। इस व्यवस्था में, कभी-कभी राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री दोनों ही एक दल के हो सकते हैं, लेकिन जब कभी वे दो अलग-अलग दलों के होते हैं तो उनमें आपस में विरोध हो सकता है। फ्रांस, रूस और श्रीलंका में ऐसी ही व्यवस्था है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

नेहा– यह तो बहुत सरल है। जिस देश में राष्ट्रपति है वहाँ अध्यक्षात्मक कार्यपालिका और जिस देश में प्रधानमंत्री है वहाँ संसदीय कार्यपालिका है।

आप नेहा को कैसे समझाएँगे कि ऐसा हमेशा सच नहीं होता।

भारत में संसदीय कार्यपालिका

जब भारत का संविधान लिखा जा रहा था तब तक भारत को 1919 और 1935 के अधिनियमों के अंतर्गत संसदीय व्यवस्था के संचालन का कुछ अनुभव हो चुका था। इस अनुभव ने हमें दिखाया कि संसदीय व्यवस्था के अंतर्गत कार्यपालिका को जन-प्रतिनिधियों के द्वारा प्रभावपूर्ण तरीके से नियंत्रित किया जा सकता है। भारतीय संविधान के निर्माता एक ऐसी सरकार सुनिश्चित करना चाहते थे जो जनता की अपेक्षाओं के प्रति संवेदनशील और उत्तरदायी हो। संसदीय कार्यपालिका की जगह दूसरा विकल्प अध्यक्षात्मक सरकार का था। लेकिन अध्यक्षात्मक कार्यपालिका मुख्य कार्यकारी के रूप में राष्ट्रपति पर बहुत बल देती है और उसे सभी शक्तियों का स्रोत मानती है। अध्यक्षात्मक कार्यपालिका में व्यक्ति पूजा का खतरा बना रहता है। संविधान निर्माता एक ऐसी सरकार चाहते थे जिसमें एक शक्तिशाली कार्यपालिका तो हो, लेकिन साथ-साथ उसमें व्यक्ति पूजा पर पर्याप्त अंकुश लगे हों। संसदीय व्यवस्था में ऐसी अनेक प्रक्रियाएँ हैं जो यह सुनिश्चित करती हैं कि कार्यपालिका, विधायिका या जनता के प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी होगी और उनसे नियंत्रित भी। इसलिए, संविधान में राष्ट्रीय और प्रांतीय दोनों ही स्तरों पर संसदीय कार्यपालिका की व्यवस्था को स्वीकार किया गया।

क्या हमारे देश में बहुत मजबूत प्रधानमंत्री नहीं हुए? क्या इसका मतलब यह है कि संसदीय व्यवस्था में भी किसी एक व्यक्ति की प्रधानता जारी रह सकती है? तब तो जनता और विधायिका को लगातार सचेत रहने की ज़रूरत है।

इस व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रपति, भारत में राज्य का औपचारिक प्रधान होते हैं तथा प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद् राष्ट्रीय स्तर पर सरकार

चलाते हैं। राज्यों के स्तर पर राज्यपाल, मुख्यमंत्री और मंत्रिपरिषद् मिलकर कार्यपालिका बनाते हैं।

भारत के संविधान में औपचारिक रूप से संघ की कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति को दी गई हैं। पर वास्तव में प्रधानमंत्री के नेतृत्व में बनी मंत्रिपरिषद् के माध्यम से राष्ट्रपति इन शक्तियों का प्रयोग करता है। राष्ट्रपति 5 वर्ष के लिए चुना जाता है। राष्ट्रपति पद के लिए सीधे जनता के द्वारा निर्वाचन नहीं होता। राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष तरीके से होता है। इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन आम नागरिक नहीं बल्कि निर्वाचित विधायक और सांसद करते हैं। यह निर्वाचन समानुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली और एकल संक्रमणीय मत के सिद्धांत के अनुसार होता है।

केवल संसद ही राष्ट्रपति को महाभियोग की प्रक्रिया के द्वारा उसके पद से हटा सकती है। पिछले अध्याय में हमने पढ़ा कि इस प्रक्रिया के लिए संसद में विशेष बहुमत की ज़रूरत पड़ती है। महाभियोग केवल संविधान के उल्लंघन के आधार पर लगाया जा सकता है।

अनुच्छेद 74 (1) – ''राष्ट्रपति को सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी जिसका प्रधान, प्रधानमंत्री होगा। राष्ट्रपति अपने कृत्यों का प्रयोग करने में ऐसी सलाह के अनुसार कार्य करेगा।

परंतु राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् से ऐसी सलाह ... पर पुनर्विचार करने को कह सकता है और राष्ट्रपति ऐसे पुनर्विचार के पश्चात दी गई सलाह के अनुसार ही कार्य करेगा।''

इस कथन में जिस शब्द 'ही' का प्रयोग किया गया है, क्या आप उसका अर्थ जानते हैं? उसका अर्थ यह है कि राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह मानने को बाध्य है। राष्ट्रपति की शक्ति पर उठे विवाद के कारण संविधान का संशोधन करके यह स्पष्ट कर दिया गया कि राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह मानने को बाध्य है। बाद में एक और संशोधन के द्वारा यह निर्णय किया गया कि राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् को अपनी सलाह पर एक बार पुनर्विचार करने के लिए कह सकता है, लेकिन उसे मंत्रिपरिषद् के द्वारा पुनर्विचार के बाद दी गई सलाह को मानना ही पड़ेगा।

राष्ट्रपति की शक्ति और स्थिति

आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि राष्ट्रपति सरकार का औपचारिक प्रधान है। उसे औपचारिक रूप से बहुत-सी कार्यकारी, विधायी, कानूनी और आपात् शक्तियाँ प्राप्त हैं। संसदीय व्यवस्था में राष्ट्रपति वास्तव में इन शक्तियों का प्रयोग मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही करता है। प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद् को लोकसभा में बहुमत प्राप्त होता है और वे ही वास्तविक कार्यकारी हैं। अधिकतर मामलों में राष्ट्रपति को मंत्रिपरिषद् की सलाह माननी पड़ती है।

"हमने राष्ट्रपति को कोई वास्तविक शक्ति नहीं दी लेकिन उसके पद को प्रभुतापूर्ण और गरिमामय बनाया है। संविधान उसे न तो वास्तविक कार्यकारी बनाना चाहता है और न ही एकदम नाममात्र का प्रधान। संविधान उसे एक ऐसा प्रधान बनाना चाहता है जो न शासक होता है और न शासन करता है; यह उसे एक महान संवैधानिक प्रधान बनाना चाहता है ···

जवाहर लाल नेहरू, संविधान सभा वाद-विवाद, खंड छः, पृ. 734

राष्ट्रपति के विशेषाधिकार

इन बातों की चर्चा के बाद क्या हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि किसी भी परिस्थिति में राष्ट्रपति को कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है? यह एक गलत मूल्यांकन होगा। संवैधानिक रूप से राष्ट्रपति को सभी महत्त्वपूर्ण मुद्दों और मंत्रिपरिषद् की कार्यवाही के बारे में सूचना प्राप्त करने का अधिकार है। प्रधानमंत्री का यह कर्त्तव्य है कि वह राष्ट्रपति द्वारा माँगी गई सभी सूचनाएँ उसे दे। राष्ट्रपति प्रायः प्रधानमंत्री को पत्र लिखता है और देश की समस्याओं पर अपने विचार व्यक्त करता है।

मैं यहाँ कहने भर को बैठा दिया गया हूँ या मैं सचमुच के सवाल भी पूछ रहा हूँ? क्या इस पुस्तक के लेखकों ने मुझे अपने मनचाहे सवाल पूछने की शक्ति दी है या मैं वही सवाल पूछ रहा हूँ जो उनके मन में उठ रहे हैं?

राष्ट्रपति के लिए किताबों में स्त्रीलिंग और पुल्लिंग दोनों का प्रयोग किया जाता है। क्या कभी कोई महिला भी राष्ट्रपति हुई है?

इसके अतिरिक्त, कम से कम तीन अन्य अवसरों पर राष्ट्रपति अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करता है। प्रथम, जैसा कि आप पहले ही देख चुके हैं कि राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह को लौटा सकता है और उसे अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए कह सकता है। ऐसा करने में राष्ट्रपति अपने विवेक का प्रयोग करता है। जब राष्ट्रपति को ऐसा लगता है कि सलाह में कुछ गलती है या कानूनी रूप से कुछ कमियाँ हैं या फ़ैसला देश के हित में नहीं है, तो वह मंत्रिपरिषद् से अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए कह सकता है। यद्यपि मंत्रिपरिषद् पुनर्विचार के बाद भी उसे वही सलाह दुबारा दे सकती है और तब राष्ट्रपति उसे मानने के लिए बाध्य भी होगा, तथापि राष्ट्रपति के द्वारा पुनर्विचार का आग्रह अपने आप में काफी मायने रखता है। अत: यह एक तरीका है जिसमें राष्ट्रपति अपने विवेक के आधार पर अपनी शक्ति का प्रयोग करता है।

दूसरे, राष्ट्रपति के पास वीटो की शक्ति (निषेधाधिकार) होती है जिससे वह संसद द्वारा पारित विधेयकों (धन विधेयकों को छोड़ कर) पर स्वीकृति देने में विलंब कर सकता है या स्वीकृति देने से मना कर सकता है। संसद द्वारा पारित प्रत्येक विधेयक को कानून बनने से पूर्व राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। राष्ट्रपति उसे संसद को लौटा सकता है

हमने देखा कि विधेयकों को स्वीकृति देने के संबंध में राष्ट्रपति पर कोई समय सीमा नहीं है। क्या आपको पता है कि इस सिलसिले में एक घटना घट चुकी है? 1986 में संसद ने 'भारतीय पोस्ट ऑफिस (संशोधन) विधेयक' पारित किया। अनेक लोगों ने इसकी आलोचना की क्योंकि विधेयक प्रेस की स्वतंत्रता को बाधित करता था। तत्कालीन राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह ने उस पर कोई निर्णय नहीं लिया। उनका कार्यकाल समाप्त होने के बाद अगले राष्ट्रपति वेंकटरमण ने उसे पुनर्विचार के लिए संसद को लौटा दिया। तब तक, वह सरकार बदल गई जिसने विधेयक पेश किया था और 1989 में एक नई सरकार चुन कर आ गई थी। यह दूसरे दलों की गठबंधन सरकार थी और उसने इस विधेयक को दोबारा संसद में पेश ही नहीं किया। इस प्रकार, जैल सिंह के द्वारा विधेयक को स्वीकृति देने के निर्णय में विलंब करने का वास्तविक परिणाम यह हुआ कि यह विधेयक कानून न बन सका।

और उसे उस पर पुनर्विचार के लिए कह सकता है। वीटो की यह शक्ति सीमित है क्योंकि संसद उसी विधेयक को दुबारा पारित कर दे और राष्ट्रपति के पास भेजे, तो राष्ट्रपति को उस पर अपनी स्वीकृति देनी पड़ेगी। लेकिन संविधान में राष्ट्रपति के लिए ऐसी कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है जिसके अंदर ही उस विधेयक को पुनर्विचार के लिए लौटाना पड़े। इसका अर्थ यह हुआ कि राष्ट्रपति किसी भी विधेयक को बिना किसी समय सीमा के अपने पास लंबित रख सकता है। इससे राष्ट्रपति को अनौपचारिक रूप से, अपने वीटो को प्रभावी ढंग से प्रयोग करने का अवसर मिल जाता है। इसे कई बार 'पॉकेट वीटो' भी कहा जाता है।

तीसरे प्रकार का विशेषाधिकार राजनीतिक परिस्थितियों के कारण पैदा होता है। औपचारिक रूप से राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है। सामान्यत: अपनी संसदीय व्यवस्था में लोकसभा के बहुमत दल के नेता को प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त किया जाता है, इसलिए उसकी नियुक्ति में राष्ट्रपति के विशेषाधिकार का कोई प्रश्न ही नहीं। लेकिन उस परिस्थिति की कल्पना करें जिसमें चुनाव के बाद किसी भी नेता को लोकसभा में बहुमत प्राप्त न हो। इसके अतिरिक्त यह भी सोचें कि यदि गठबंधन बनाने के प्रयासों के बाद भी दो या तीन नेता यह दावा करें कि उन्हें लोकसभा में बहुमत प्राप्त है, तो क्या होगा? तब राष्ट्रपति को यह निर्णय करना है कि वह किसे प्रधानमंत्री नियुक्त करे। इस परिस्थिति में राष्ट्रपति को अपने विशेषाधिकार का प्रयोग कर यह निर्णय लेना होता है कि किसे बहुमत का समर्थन प्राप्त है या कौन सरकार बना सकता है और सरकार चला सकता है। 1989 के बाद से प्रमुख राजनीतिक परिवर्तनों के कारण राष्ट्रपति के पद का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। 1989 से 1998

प्रधानमंत्री की नियुक्ति में राष्ट्रपति की भूमिका

1977 के बाद भारत की दलीय राजनीति में प्रतिस्पर्धा काफी बढ़ गई है। और ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब लोकसभा में किसी भी दल को बहुमत नहीं मिला। इन परिस्थितियों में राष्ट्रपति ने क्या किया? मार्च 1998 के चुनाव में किसी भी दल या दलीय गठबंधन को बहुमत नहीं मिला। भाजपा और उसके सहयोगी दलों को कुल 251 सीटें मिलीं जो बहुमत से 21 कम थी। राष्ट्रपति नारायणन ने एक लंबी प्रक्रिया अपनाई। उन्होंने गठबंधन के नेता अटल बिहारी बाजपेयी से "अपने दावे के समर्थन में संबंधित राजनीतिक दलों के दस्तावेज़ प्रस्तुत करने" को कहा। इससे भी आगे जाकर राष्ट्रपति ने वाजपेयी को पदग्रहण करने के मात्र दस दिनों के भीतर विश्वास मत प्राप्त करने को कहा।

तक हुए चार संसदीय चुनावों में किसी भी एक दल या दलीय गठबंधन को लोकसभा में स्पष्ट बहुमत नहीं मिल सका। इन परिस्थितियों की माँग थी कि राष्ट्रपति हस्तक्षेप करके या तो सरकार का गठन कराए या फिर प्रधानमंत्री द्वारा लोकसभा में बहुमत सिद्ध न कर पाने के बाद उसकी सलाह पर लोक सभा भंग कर दे।

अत: यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रपति का विशेषाधिकार राजनीतिक परिस्थितियों पर आधारित होता है। जब सरकार स्थायी न हो और गठबंधन सरकार सत्ता में हों तब राष्ट्रपति के हस्तक्षेप की संभावनाएँ बढ़ जाती है।

राष्ट्रपति मुख्यत: एक औपचारिक शक्ति वाला पद है और वह राष्ट्र का अलंकारिक प्रधान है। ऐसे में आप पूछ सकते हैं कि तब हमें राष्ट्रपति की क्या आवश्यकता है? संसदीय व्यवस्था में मंत्रिपरिषद् विधायिका में बहुमत के समर्थन पर निर्भर होती है। इसका अर्थ यह है कि मंत्रिपरिषद् को कभी भी हटाया जा सकता है और तब उसकी जगह एक नई मंत्रिपरिषद् की नियुक्ति करनी पड़ेगी। ऐसी परिस्थिति में एक ऐसे राष्ट्र–प्रमुख की ज़रूरत पड़ती है जिसका कार्यकाल स्थायी हो, जिसके पास प्रधानमंत्री को नियुक्त करने की शक्ति हो और जो सांकेतिक रूप से पूरे देश का प्रतिनिधित्व कर सके। सामान्य परिस्थितियों में राष्ट्रपति की यही भूमिका है। लेकिन जब किसी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिलता तब राष्ट्रपति पर निर्णय लेने और देश की सरकार को चलाने के लिए प्रधानमंत्री को नियुक्त करने की अतिरिक्त ज़िम्मेदारी होती है।

भारत का उपराष्ट्रपति

उपराष्ट्रपति पाँच वर्ष के लिए चुना जाता है। उसको भी उसी तरह चुनते हैं जैसे राष्ट्रपति को। केवल इतना अंतर है कि उसके निर्वाचक मंडल में राज्य विधान सभा के सदस्य नहीं होते। उपराष्ट्रपति को हटाने के लिए राज्य सभा को अपने बहुमत से इस आशय का प्रस्ताव पास करना पड़ता है और उस प्रस्ताव पर लोकसभा की सहमति लेनी पड़ती है। उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन अध्यक्ष होता है और राष्ट्रपति की मृत्यु, त्यागपत्र, महाभियोग द्वारा हटाए जाने या अन्य किसी कारण से रिक्त होने पर वह कार्यवाहक राष्ट्रपति का काम करता है। उपराष्ट्रपति तभी तक कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में काम करता है जब तक कोई नया राष्ट्रपति नहीं चुन लिया जाता। फखरुद्दीन अली अहमद की मृत्यु के बाद बीडी जत्ती तब तक कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में काम करते रहे जब तक नए राष्ट्रपति का चुनाव नहीं हो गया।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

कल्पना करें कि प्रधानमंत्री जिस राज्य में इस आधार पर राष्ट्रपति शासन लगाना चाहता है कि वहाँ की सरकार दलितों पर अत्याचार रोकने में विफल रही है। राष्ट्रपति की सोच कुछ अलग है। उसका कहना है कि राष्ट्रपति शासन का अपवाद स्वरूप ही प्रयोग करना चाहिए। इस स्थिति में राष्ट्रपति के पास निम्नलिखित में से कौन विकल्प है?

(क) वह प्रधानमंत्री को बताए कि राष्ट्रपति शासन की घोषणा करने वाले आदेश पर वह हस्ताक्षर नहीं करेगा।

(ख) प्रधानमंत्री को बर्खास्त कर दे।

(ग) वह प्रधानमंत्री से वहाँ केंद्रीय रिज़र्व पुलिस बल भेजने को कहे।

(घ) एक प्रेस वक्तव्य दे कि क्यों प्रधानमंत्री गलत है।

(ङ) इस संबंध में प्रधानमंत्री से बातचीत करे और उसे ऐसा करने से रोके परंतु यदि प्रधानमंत्री दृढ़ रहे तब उस पर हस्ताक्षर कर दे।

कार्टून बूझें

शंकर, © चिल्ड्रंस बुक ट्रस्ट
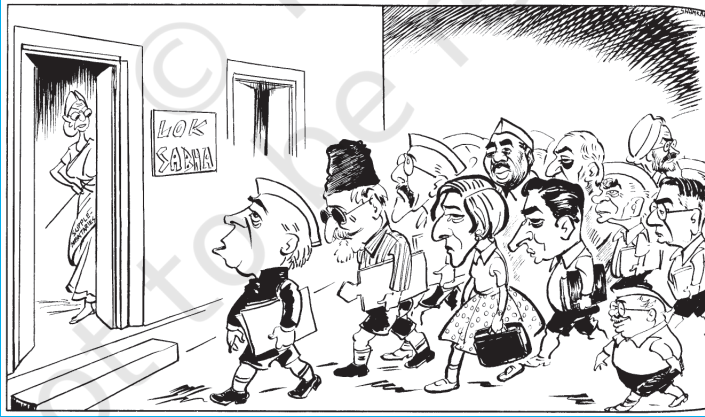
22 अगस्त 1954

प्रधानमंत्री के बिना कोई मंत्रिपरिषद् नहीं होती। यह कार्टून बताता है कि किस तरह प्रधानमंत्री सरकार की 'अगुआइ' करता है।

प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद्

भारत के प्रधानमंत्री पद का उल्लेख किए बिना भारतीय सरकार या राजनीति की कोई चर्चा नहीं हो सकती। क्या आप सोच सकते हैं कि ऐसा क्यों?

कार्टून बूझें

क्या सिर्फ मंत्री-पद ही मायने रखता है? कार, बंगला, नौकर, यात्रा, विदेश-भ्रमण, सुरक्षा और सचिव वगैरह आपके लिए कोई मायने नहीं रखते?

लोग मंत्री बनना क्यों चाहते हैं? इस कार्टून में शायद यह बताया गया है कि लोग सुख-सुविधा उठाने के लिए मंत्री बनना चाहते हैं। लेकिन तब किन्हीं खास मंत्रालयों को पाने के लिए होड़ क्यों मची रहती है?

इस अध्याय में आप पहले पढ़ चुके हैं कि राष्ट्रपति केवल मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही अपनी शक्तियों का प्रयोग करता है। प्रधानमंत्री इस मंत्रिपरिषद् का प्रधान है। अत: मंत्रिपरिषद् के प्रधान के रूप में प्रधानमंत्री अपने देश की सरकार का सबसे महत्त्वपूर्ण पदाधिकारी हो जाता है।

संसदीय शासन में यह ज़रूरी है कि प्रधानमंत्री को लोकसभा में बहुमत प्राप्त हो। बहुमत का यह समर्थन भी प्रधानमंत्री को बहुत शक्तिशाली बना देता है। जैसे ही प्रधानमंत्री बहुमत का समर्थन खो देता है, वह अपना पद भी खो देता है। स्वतंत्रता के बाद कई वर्षों तक काँग्रेस पार्टी का लोकसभा में बहुमत बना रहा, जिससे उसी का नेता प्रधानमंत्री बनता रहा। 1989 से अनेक ऐसे अवसर आए जब लोकसभा में किसी भी दल को बहुमत नहीं मिला। अनेक राजनीतिक दलों को तालमेल कर गठबंधन बनाना पड़ा जिसे लोकसभा में बहुमत प्राप्त हो। इस परिस्थिति में जो नेता सहयोगी दलों को अधिकतर स्वीकार होता है वह प्रधानमंत्री बनता है। औपचारिक रूप से, जिस नेता को लोकसभा में बहुमत का समर्थन प्राप्त होता है, राष्ट्रपति उसे प्रधानमंत्री नियुक्त करता है।

प्रधानमंत्री तय करता है कि उसकी मंत्रिपरिषद् में कौन लोग मंत्री होंगे। प्रधानमंत्री विभिन्न मंत्रियों में पद-स्तर और मंत्रालयों का आबंटन करता है। मंत्रियों को उनकी वरिष्ठता और राजनीतिक महत्त्व के अनुसार मंत्रिमंडल का मंत्री, राज्यमंत्री या उपमंत्री बनाया जाता है। इसी प्रकार, राज्यों में मुख्यमंत्री अपने दल या सहयोगी दलों से मंत्री चुनते हैं। प्रधानमंत्री और सभी मंत्रियों के लिए संसद का सदस्य

होना अनिवार्य है। संसद का सदस्य हुए बिना यदि कोई व्यक्ति मंत्री या प्रधानमंत्री बन जाता है तो उसे छः महीने के भीतर ही संसद के सदस्य के रूप में निर्वाचित होना पड़ता है।

संविधान सभा में अनेक सदस्यों का विचार था कि मंत्रियों का चयन विधायिका को करना चाहिए न कि प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री को –

मेरे दृष्टिकोण से प्रांतों के लिए वह स्विस प्रणाली सर्वोत्तम व्यवस्था है जिसमें विधायिका कार्यपालिका को एक निश्चित समय ··· के लिए चुनती है। ··· एकल संक्रमणीय मत प्रणाली वह सर्वोत्तम व्यवस्था है जो कार्यपालिका की नियुक्ति के लिए प्रयोग की जा सकती है क्योंकि उसमें सभी हितों का प्रतिनिधित्व होगा और विधायिका का कोई भी दल यह महसूस न कर सकेगा कि उसका प्रतिनिधित्व नहीं है।

बेगम ऐज़ाज़ रसूल

संविधान सभा के वाद-विवाद, खंड IV, पृष्ठ 631, 17 जुलाई 1947

मंत्रिपरिषद् का आकार

संविधान के 91वें संशोधन अधिनियम (2003) के पहले, मंत्रिपरिषद् का आकार समय की माँग और परिस्थितियों के अनुरूप तय किया जाता था। लेकिन ऐसे में मंत्रिपरिषद् का आकार बहुत बड़ा हो जाता था। इसके अतिरिक्त, जब किसी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिलता था, तब वह संसद के अन्य सदस्यों को मंत्री पद का लालच देकर समर्थन हासिल करने की कोशिश करता था क्योंकि तब मंत्रिपरिषद् की सदस्य संख्या पर कोई प्रतिबंध न था। यह अनेक राज्यों में भी हो रहा था। अतः संविधान का संशोधन करके यह व्यवस्था की गई कि मंत्रिपरिषद् के सदस्यों की संख्या लोक सभा (या राज्यों में विधान सभा) की कुल सदस्य संख्या के 15 प्रतिशत से अधिक न होगी।

विधायिका वाले अध्याय में आप विस्तार से उन तरीकों के बारे में पढ़ेंगे जिनसे संसद कार्यपालिका को नियंत्रित करती है। लेकिन हमें याद रखना चाहिए कि संसदीय शासन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कार्यपालिका सतत रूप से विधायिका के नियंत्रण और देख-रेख में रहती है।

मंत्रिपरिषद् लोकसभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी है। इस प्रावधान का अर्थ है कि जो सरकार लोकसभा में विश्वास खो देती है उसे त्यागपत्र देना पड़ता है।

इस सिद्धांत के अनुसार मंत्रिपरिषद् संसद की एक कार्यकारी समिति है और वह संसद के प्रतिनिधि के रूप में सामूहिक रूप से शासन करती है। सामूहिक उत्तरदायित्व मंत्रिमंडल की एकजुटता के सिद्धांत पर आधारित है। इसकी भावना यह है कि यदि किसी एक मंत्री के विरुद्ध भी अविश्वास प्रस्ताव पारित हो जाए तो संपूर्ण मंत्रिपरिषद् को त्यागपत्र देना पड़ता है। इसका अर्थ यह भी है कि यदि कोई मंत्री मंत्रिमंडल की नीति या निर्णय से सहमत नहीं, तो उसे उस निर्णय को स्वीकार कर लेना चाहिए या त्यागपत्र दे देना चाहिए। जिस नीति के बारे में सामूहिक उत्तरदायित्व हो उसे मानना या उसे लागू करना सभी मंत्रियों के लिए ज़रूरी है।

भारत में, प्रधानमंत्री का सरकार में स्थान सर्वोपरि है। बिना प्रधानमंत्री के मंत्रिपरिषद् का कोई अस्तित्त्व नहीं है। मंत्रिपरिषद् तभी अस्तित्व में आती है जब प्रधानमंत्री अपने पद का शपथ ग्रहण कर लेता है। प्रधानमंत्री की मृत्यु या त्यागपत्र से पूरी मंत्रिपरिषद् ही भंग हो जाती है जबकि किसी मंत्री की मृत्यु, हटाए जाने या त्यागपत्र के कारण मंत्रिपरिषद् में केवल एक स्थान खाली होता है। प्रधानमंत्री एक तरफ मंत्रिपरिषद् तथा दूसरी ओर राष्ट्रपति और संसद के बीच एक सेतु का काम करता है। इसी भूमिका के कारण पंडित नेहरू ने प्रधानमंत्री को सरकार की केंद्रीय धुरी की संज्ञा दी। प्रधानमंत्री का यह संवैधानिक दायित्व भी है कि वह सभी संघीय मामलों के प्रशासन और प्रस्तावित कानूनों के बारे में राष्ट्रपति को सूचित करे। प्रधानमंत्री सरकार के सभी महत्त्वपूर्ण निर्णयों में सम्मिलित होता है और सरकार की नीतियों के बारे में निर्णय लेता है। इस प्रकार, प्रधानमंत्री की शक्तियों के अनेक स्रोत हैं, जैसे – मंत्रिपरिषद् पर नियंत्रण, लोकसभा का नेतृत्व, अधिकारी जमात पर आधिपत्य, मीडिया तक पहुँच, चुनाव के दौरान उसके व्यक्तित्व का उभार, तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और विदेश यात्राओं के दौरान राष्ट्रीय नेता की छवि आदि।

लेकिन, प्रधानमंत्री की शक्तियाँ और उनका प्रयोग तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। जब भी किसी एक

क्या कोई आदमी ताकतवर होने के चलते प्रधानमंत्री बनता है या प्रधानमंत्री बनने के बाद वह ताकतवर हो जाता है?

राजनीतिक दल को लोकसभा में बहुमत मिला, तब प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल की शक्तियाँ निर्विवाद रहीं। परंतु जब राजनीतिक दलों के गठबंधन की सरकारें बनीं तब ऐसा नहीं रहा। 1989 से हमने भारत में अनेक गठबंधन सरकारों को देखा है। इनमें से कई सरकारें लोकसभा की पूरी अवधि के लिए सत्ता में न रह सकीं। बहुमत समाप्त होने के कारण उन्होंने त्यागपत्र दे दिया या वे हटा दी गईं। इन घटनाओं से संसदीय शासन का काम-काज प्रभावित हुआ है।

इस सिलसिले में पहली बात तो यह है कि इन घटनाओं से प्रधानमंत्री के चयन में राष्ट्रपति के विशेषाधिकारों की भूमिका बढ़ी है। दूसरे, इस अवधि में गठबंधन राजनीति के कारण राजनीतिक सहयोगियों में परामर्श की प्रवृत्ति बढ़ी है जिससे प्रधानमंत्री की सत्ता में कुछ सेंध लगी है। तीसरे, इससे प्रधानमंत्री के अनेक विशेषाधिकारों जैसे मंत्रियों का चयन और उनके पद-स्तर तथा मंत्रालय के चयन पर भी कुछ अंकुश लगा है। चौथे, प्रधानमंत्री सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों को भी अकेले तय नहीं कर सकता। चुनाव के पूर्व और चुनाव के बाद विभिन्न विचारधारा वाले अनेक राजनीतिक दल सहयोग करके सरकार बनाते हैं। सहयोगी दलों के बीच काफी बातचीत और समझौते के बाद ही नीतियाँ बन पाती हैं। इस पूरी प्रक्रिया में प्रधानमंत्री को एक नेता से अधिक एक मध्यस्थ की भूमिका निभानी पड़ती है।

कार्टून बूझें

मेरी परेशानियाँ खत्म नहीं हुईं, मैंने विश्वास मत जीत लिया है।

मुख्यमंत्री विश्वासमत जीतकर भी खुश नहीं हैं। वे कह रहे हैं कि विश्वासमत जीतने के बावजूद उनकी परेशानियां बरकरार है। क्या आप सोच सकते हैं, वे ऐसा क्यों कह रहे हैं?

कुछेक बदलावों के साथ राज्यों में भी ठीक इसी तरह की लोकतांत्रिक कार्यपालिका होती है। सबसे महत्त्वपूर्ण अंतर यह है कि राज्य में एक राज्यपाल होता है जो, (केंद्रीय सरकार की सलाह पर) राष्ट्रपति के द्वारा नियुक्त किया जाता है। यद्यपि प्रधानमंत्री की ही तरह मुख्यमंत्री भी विधान सभा में बहुमत दल

का नेता होता है, पर राज्यपाल के पास ज़्यादा विवेकाधीन शक्तियाँ होती हैं। बहरहाल, राज्य के स्तर पर भी संसदनात्मक व्यवस्था के प्रमुख सिद्धांत लागू होते हैं।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

मान लीजिए कि प्रधानमंत्री को मंत्रिपरिषद् का गठन करना है। वह क्या करेगा/करेगी –

(क) विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों का चयन।

(ख) केवल अपनी पार्टी के लोगों का चयन ।

(ग) केवल व्यक्तिगत रूप से निष्ठावान और विश्वसनीय लोगों का चयन।

(घ) केवल सरकार के समर्थकों का चयन।

(ङ) मंत्री बनने की होड़ में शामिल व्यक्तियों राजनीतिक ताकत का अंदाज़ा लगाकर ही उनका चयन।

स्थायी कार्यपालिका – नौकरशाही

मंत्रियों के निर्णय को कौन लागू करता है?

शासन के कार्यकारी अंग में प्रधानमंत्री, मंत्रिगण और नौकरशाही या प्रशासनिक मशीनरी का एक विशाल संगठन सम्मिलित होता है। इस ढाँचे और सैन्य सेवाओं में अंतर करने के लिए इसे नागरिक सेवा कहते हैं। सरकार के स्थाई कर्मचारी के रूप में कार्य करने वाले प्रशिक्षित और प्रवीण अधिकारी नीतियों को बनाने तथा उसे लागू करने में मंत्रियों का सहयोग करते हैं। लोकतंत्र में निर्वाचित प्रतिनिधि और मंत्रिगण सरकार के प्रभारी होते हैं और प्रशासन उनके नियंत्रण और देख-रेख में होता है। संसदीय शासन में, विधायिका प्रशासन को नियंत्रित करती है। यह मंत्री की ज़िम्मेदारी है कि वह प्रशासन पर राजनीतिक नियंत्रण बनाए रखे। भारत में एक दक्ष प्रशासनिक मशीनरी मौजूद है। लेकिन यह मशीनरी राजनीतिक रूप से उत्तरदायी है। नौकरशाही से यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह राजनीतिक रूप से तटस्थ हो। इसका अर्थ यह है कि

नौकरशाही नीतियों पर विचार करते समय किसी राजनीतिक दृष्टिकोण का समर्थन नहीं करेगी। प्रजातंत्र में यह संभव है कि कोई पार्टी चुनाव में हार जाए और नई सरकार पिछली सरकार की नीतियों की जगह नई नीतियाँ अपनाना चाहे। ऐसी स्थिति में, प्रशासनिक मशीनरी की ज़िम्मेदारी है कि वह नई सरकार को अपनी नीति बनाने और उसे लागू करने में मदद करे।

आज भारतीय नौकरशाही का स्वरूप बहुत जटिल हो गया है। इसमें अखिल भारतीय सेवाएँ, प्रांतीय सेवाएँ, स्थानीय सरकार के कर्मचारी और लोक उपक्रमों के तकनीकी तथा प्रबंधकीय अधिकारी सम्मिलित हैं। हमारे संविधान निर्माता गैर-राजनीतिक और व्यावसायिक रूप से दक्ष प्रशासनिक मशीनरी के महत्त्व को जानते थे। वे सिविल सेवा या नौकरशाही के सदस्यों को बिना किसी भेदभाव के योग्यता के आधार पर चयनित करना चाहते थे। अत: भारत सरकार के लिए सिविल सेवा के सदस्यों की भर्ती की प्रक्रिया का कार्य संघ लोक सेवा आयोग को सौंपा गया है। ऐसे ही लोक सेवा आयोग राज्यों में भी बनाए गए हैं। लोक सेवा आयोग के सदस्यों को एक निश्चित कार्यकाल के लिए नियुक्त किया जाता है। उनको सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के जाँच के आधार पर ही निलंबित या अपदस्थ किया जा सकता है। दक्षता और योग्यता को आधार बनाकर भर्ती की जाती है, लेकिन संविधान यह भी सुनिश्चित करता है कि पिछड़े वर्गों के साथ-साथ समाज के सभी वर्गों को सरकारी नौकरशाही का हिस्सा बनने का मौका मिले। इस उद्देश्य के लिए, संविधान दलित और आदिवासियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करता है। बाद में महिलाओं और अन्य पिछड़ी जातियों को भी आरक्षण दिया गया। इन प्रावधानों से यह सुनिश्चित होता है कि नौकरशाही में सभी समूहों का प्रतिनिधित्व होगा तथा सामाजिक असमानताएँ सिविल सेवाओं में भर्ती के मार्ग में रोड़ा नहीं बनेंगी।

भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस) तथा भारतीय पुलिस सेवा (आईपीएस) के लिए उम्मीदवारों का चयन संघ लोक सेवा आयोग करता है। ये अधिकारी प्रांतीय स्तर पर शीर्षस्थ

हाँ, मुझे मालूम है कि अधिकारी लोगों की मदद के लिए हैं, लेकिन लोग सदा इन अधिकारियों से डरे रहते हैं और अधिकारियों का व्यवहार भी शासकों जैसा होता है।

सिविल सेवाओं का वर्गीकरण

अखिल भारतीय सेवाएँ –
भारतीय प्रशासनिक सेवा
भारतीय पुलिस सेवा

केंद्रीय सेवाएँ –
भारतीय विदेश सेवा
भारतीय राजस्व सेवा

प्रांतीय सेवाएँ –
बिक्रीकर अधिकारी
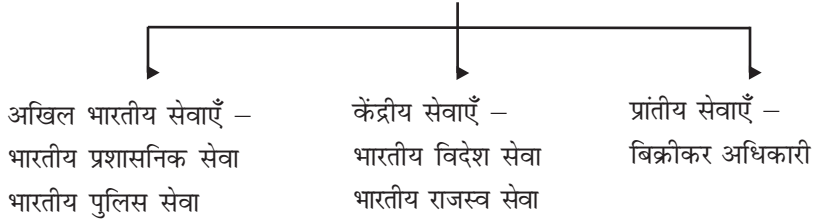
नौकरशाही की रीढ़ होते हैं। आपको शायद पता हो कि एक जिले का जिलाधिकारी (कलेक्टर) उस जिले में सरकार का सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकारी होता है। क्या आप जानते हैं कि जिलाधिकारी सामान्यत: आईएएस स्तर का अधिकारी होता है और वह केंद्र सरकार द्वारा बनाई गई सेवा शर्तों से नियंत्रित होता है। एक आईएएस अथवा आईपीएस अधिकारी किसी एक राज्य के संबद्ध कर दिया जाता है, जहाँ वह राज्य सरकार की देख-रेख में काम करता है। लेकिन आईएएस और आईपीएस अधिकारी केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त होते हैं और वे केंद्र सरकार की सेवा में वापस जा सकते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि केवल केंद्रीय सरकार ही उनके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई कर सकती है। इसका अर्थ यह हुआ कि राज्यों के प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी केंद्रीय सरकार की देख-रेख और नियंत्रण में रहते हैं। संघ लोक सेवा आयोग द्वारा नियुक्त आईएएस और आईपीएस अधिकारियों के अतिरिक्त राज्य के प्रशासन में राज्य लोक सेवा आयोगों द्वारा नियुक्त अधिकारियों का भी योगदान होता है। जैसा कि हम आगे संघवाद वाले अध्याय में पढ़ेंगे, नौकरशाही की यह विशेषता राज्यों के प्रशासन पर केंद्रीय सरकार के नियंत्रण को मजबूत कर देती है।

नौकरशाही वह माध्यम है जिसके द्वारा सरकार की लोकहितकारी नीतियाँ जनता तक पहुँचती है। पर नौकरशाही इतनी शक्तिशाली होती है कि आम आदमी सरकारी अधिकारियों तक पहुँचने से डरता है। यह लोगों का आम अनुभव है कि नौकरशाही सामान्य नागरिकों की माँगों और आशाओं के प्रति संवेदनशील नहीं होती। लेकिन जब लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार नौकरशाही को नियंत्रित करती है, तब इनमें से कुछ समस्याओं को प्रभावी तरीके से हल किया जा सकता है। वहीं दूसरी ओर, ज़्यादा राजनीतिक हस्तक्षेप से नौकरशाही राजनीतिज्ञों के हाथ का खिलौना बन जाती है। हालाँकि संविधान ने भर्ती के लिए एक स्वतंत्र मशीनरी बनायी लेकिन अनेक लोगों का मानना है कि सरकारी कर्मचारियों को अपने कार्यों के संपादन में राजनीतिक हस्तक्षेप से बचाने की कोई व्यवस्था नहीं है। यह भी महसूस किया जाता है कि जनता के प्रति नौकरशाही का उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त प्रावधान नहीं है। पर, यह

आशा की जाती है कि सूचना का अधिकार जैसे कदम नौकरशाही को और अधिक उत्तरदायी और संवेदनशील बना सकेंगे।

निष्कर्ष

आधुनिक कार्यपालिका सरकार की एक अत्यंत शक्तिशाली संस्था है। सभी प्रकार की सरकारों में, सरकार के अन्य अंगों की अपेक्षा कार्यपालिका ज़्यादा शक्तिशाली होती है। इससे कार्यपालिका पर लोकतांत्रिक नियंत्रण की आवश्यकता बढ़ जाती है। हमारे संविधान निर्माताओं की यह दूर-दृष्टि ही थी कि उन्होंने कार्यपालिका को विधायिका के नियमित नियंत्रण और देख-रेख में रखा। इस प्रकार, एक संसदीय कार्यपालिका का चयन किया गया। समय-समय पर होने वाले चुनाव, व्यक्तियों के प्रयोग पर संवैधानिक अंकुशों और लोकतांत्रिक राजनीति ने यह सुनिश्चित किया है कि भारत में कार्यपालिका अनुत्तरदायी न होगी।

प्रश्नावली

1. संसदीय कार्यपालिका का अर्थ होता है –
   (क) जहाँ संसद हो वहाँ कार्यपालिका का होना
   (ख) संसद द्वारा निर्वाचित कार्यपालिका
   (ग) जहाँ संसद कार्यपालिका के रूप में काम करती है
   (घ) ऐसी कार्यपालिका जो संसद के बहुमत के समर्थन पर निर्भर हो

2. निम्नलिखित संवाद पढ़ें। आप किस तर्क से सहमत हैं और क्यों?
   अमित – संविधान के प्रावधानों को देखने से लगता है कि राष्ट्रपति का काम सिर्फ ठप्पा मारना है।
   शमा – राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है। इस कारण उसे प्रधानमंत्री को हटाने का भी अधिकार होना चाहिए।
   राजेश – हमें राष्ट्रपति की ज़रूरत नहीं। चुनाव के बाद, संसद बैठक बुलाकर एक नेता चुन सकती है जो प्रधानमंत्री बने।

3. निम्नलिखित को सुमेलित करें –

(क) भारतीय विदेश सेवा	जिसमें बहाली हो उसी प्रदेश में काम करती है।
(ख) प्रादेशिक लोक सेवा	केंद्रीय सरकार के दफ़्तरों में काम करती है जो या तो देश की राजधानी में होते हैं या देश में कहीं और।
(ग) अखिल भारतीय सेवाएँ	जिस प्रदेश में भेजा जाए उसमें काम करती है, इसमें प्रतिनियुक्ति पर केंद्र में भी भेजा जा सकता है।
(घ) केंद्रीय सेवाएँ	भारत के लिए विदेशों में कार्यरत।

4. उस मंत्रालय की पहचान करें जिसने निम्नलिखित समाचार को जारी किया होगा। यह मंत्रालय प्रदेश की सरकार का है या केंद्र सरकार का और क्यों?
   (क) आधिकारिक तौर पर कहा गया है कि सन् 2004–05 में तमिलनाडु पाठ्यपुस्तक निगम कक्षा 7, 10 और 11 की नई पुस्तकें जारी करेगा।
   (ख) भीड़ भरे तिरूवल्लुर–चेन्नई खंड में लौह–अयस्क निर्यातकों की सुविधा के लिए एक नई रेल लूप लाइन बिछाई जाएगी। नई लाइन लगभग 80 कि.मी. की होगी। यह लाइन पुट्टुर से शुरु होगी और बंदरगाह के निकट अतिपट्टू तक जाएगी।
   (ग) रमयमपेट मंडल में किसानों की आत्महत्या की घटनाओं की पुष्टि के लिए गठित तीन सदस्यीय उप–विभागीय समिति ने पाया कि इस माह आत्महत्या करने वाले दो किसान फ़सल के मारे जाने से आर्थिक समस्याओं का सामना कर रहे थे।

5. प्रधानमंत्री की नियुक्ति करने में राष्ट्रपति –
   (क) लोकसभा के सबसे बड़े दल के नेता को चुनता है।
   (ख) लोकसभा में बहुमत अर्जित करने वाले गठबंधन–दलों में सबसे बड़े दल के नेता को चुनता है।
   (ग) राज्यसभा के सबसे बड़े दल के नेता को चुनता है।
   (घ) गठबंधन अथवा उस दल के नेता को चुनाता है जिसे लोकसभा के बहुमत का समर्थन प्राप्त हो।

6. इस चर्चा को पढ़कर बताएँ कि कौन-सा कथन भारत पर सबसे ज़्यादा लागू होता है –

   आलोक – प्रधानमंत्री राजा के समान है। वह हमारे देश में हर बात का फ़ैसला करता है।

   शेखर – प्रधानमंत्री सिर्फ 'बराबरी के सदस्यों में प्रथम' है। उसे कोई विशेष अधिकार प्राप्त नहीं। सभी मंत्रियों और प्रधानमंत्री के अधिकार बराबर हैं।

   बॉबी – प्रधानमंत्री को दल के सदस्यों तथा सरकार को समर्थन देने वाले सदस्यों का ध्यान रखना पड़ता है। लेकिन कुल मिलाकर देखें तो नीति-निर्माण तथा मंत्रियों के चयन में प्रधानमंत्री की बहुत ज़्यादा चलती है।

7. क्या मंत्रिमंडल की सलाह राष्ट्रपति को हर हाल में माननी पड़ती है? आप क्या सोचते हैं? अपना उत्तर अधिकतम 100 शब्दों में लिखें।

8. संसदीय-व्यवस्था ने कार्यपालिका को नियंत्रण में रखने के लिए विधायिका को बहुत-से अधिकार दिए हैं। कार्यपालिका को नियंत्रित करना इतना ज़रूरी क्यों है? आप क्या सोचते हैं?

9. कहा जाता है कि प्रशासनिक-तंत्र के कामकाज में बहुत ज़्यादा राजनीतिक हस्तक्षेप होता है। सुझाव के तौर पर कहा जाता है कि ज़्यादा से ज़्यादा स्वायत्त एजेंसियाँ बननी चाहिए जिन्हें मंत्रियों को जवाब न देना पड़े।
   (क) क्या आप मानते हैं कि इससे प्रशासन ज़्यादा जन-हितैषी होगा?
   (ख) क्या आप मानते हैं कि इससे प्रशासन की कार्य कुशलता बढ़ेगी?
   (ग) क्या लोकतंत्र का अर्थ यह होता है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों का प्रशासन पर पूर्ण नियंत्रण हो?

10. नियुक्ति आधारित प्रशासन की जगह निर्वाचन आधारित प्रशासन होना चाहिए - इस विषय पर 200 शब्दों में एक लेख लिखो।